International Journal of History 2020; 2(2): 184-187

E-ISSN: 2706-9117
P-ISSN: 2706-9109
IJH 2020; 2(2): 184-187
Received: 17-05-2020
Accepted: 19-06-2020

मनोज कुमार पंडित
गम्हरिया, मरौना, निर्मली, सुपौल, बिहार, भारत

Corresponding Author:
मनोज कुमार पंडित
गम्हरिया, मरौना, निर्मली, सुपौल, बिहार, भारत

ताना भगत आन्दोलन का छोटानागपुर के क्षेत्र पर प्रभाव

मनोज कुमार पंडित

सारांश
ताना भगत–आन्दोलन के जनक जतरा भगत का जन्म 1888 ई० में गुमला जिले के बिशुनपुर प्रखंड के अंतर्गत चिगरी नावाटोली में हुआ था। इनके पिता का नाम कोहरा भगत और माता का नाम लिवरी भगत था। बुधनी भगत इनकी पत्नी थी। जतरा भगत की जन्म तिथि ठीक–ठीक ज्ञात नहीं किन्तु आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी तिथि को सामान्य मिलने के कारण प्रत्येक वर्ष गांधी जयन्ती के दिन ही चिंगरी ग्राम में इनकी जयंती मनायी जाती है।

मुख्य शब्द– ताना भगत आन्दोलन, छोटानागपुर

प्रस्तावना
जतरा भगत ने जब इस आन्दोलन को शुरू किया तब वह मती (ओझा) का प्रशिक्षण ले रहा था। कहा जाता है कि एक रात वह जब प्रशिक्षण लेकर लौट रहा था तब धर्मेश ने उसे दर्शन दिया और कहा कि वह मतिभाव सीखना बन्द कर दे और भूत–प्रेत तथा बलि इत्यादि में विश्वास करना छोड़ दे। वह माँस–मदिरा का परित्याग कर दे। खेतों में हल चलाना बन्द कर दे क्योंकि इससे गायों–बैलों को केवल तकलीफ होती है और अकाल एवं गरीबी से भी छुटकारा नहीं मिलता है। जतरा ने लोगों से कहा कि ईश्वर नहीं चाहता कि लोग जमींदारों, अन्य धर्मावलंबियों तथा गैर–आदिवासियों के यहाँ कुलियों एवं मजदूरों का काम करे। उसने घोषणा की कि ईश्वर ने उसे जनजातियों का नेतृत्व सौंपा है। उन्हें समझाने को कहा है कि वे धर्मेश की पूजा करें क्योंकि इसी से उनकी इच्छाएँ पूर्ण होंगी। इस तरह उसने उन विचारों को व्यक्त किया जो आदिवासियों के मानस को काफी समय से उद्वेलित कर रहे थे। दूसरे शब्दों में, उसने उन विचारों को व्यक्त किया जो आदिवासियों के मानस को काफी समय से उद्वेलित कर रहे थे। दूसरे शब्दों में उसने एक निश्चित जनजातीय धर्म स्थापित करने में लोगों की सहायता की। वस्तुतः इस प्रक्रिया की शुरूआत बिरसा मुंडा के समय में ही हो गयी थी। जतरा तथा अन्य परवर्ती जनजातीय मसीहाओं ने उस परिकल्पना को मूर्त रूप दिया।

ताना भगत–आन्दोलन के साथ एक अन्य व्यक्ति हनुमान उराँव का भी नाम जुड़ा हुआ था। इनका जन्म–स्थान भी जतरा भगत का ही गाँव था। बहुत संभव है कि दोनों व्यक्ति एक ही रहे हों और एक नवीन सम्प्रदाय के बहादुर जनक के रूप में जतरा भगत का ही उपनाम हनुमान हो गया है। एक समकालीन महिला, देवमनियां जो सिसई थाना के बभुरी ग्राम की निवासी थी, इस आन्दोलन से संबद्ध थी। उसने जतरा भगत की काफी सहायता की। जतरा भगत के नाम से जुड़े भक्ति–गीत देशप्रेम की भावना से ओत–प्रोत हैं। इनसे विदेशी वस्तुओं के प्रति उसकी घृणा–भावना भी प्रकट होती है। धीरे–धीरे यह आन्दोलन जमींदार, मिशन तथा अंततः ब्रिटिश विरोधी बन गया।

मांडर क्षेत्र में शिबू भगत ने आन्दोलन का प्रचार–प्रसार किया। उसके विषय में कथा है कि मृत्यु के कुछ दिनों बाद वह पुनर्जीवित हो उठा और लोगों ने समझा कि वह ईश्वर से साक्षात्कार कर लौट आया था। उसने कहा कि भगवान ने उसे ताना सम्प्रदाय के प्रचार–प्रसार के लिए पुनः भेज दिया है। थोड़ी सफलता मिलने पर उसने दामोदर के तट पर काले बकरे की बलि देकर उसके मांस को अपने अनुयायियों में वितरित किया। उसने कहा कि आन्दोलन का ध्येय प्राप्त हो चुका था और अब ताना भगत मांस खा सकते थे। मांसभक्षी भगत 'जुलाहा भगत' कहे गये और ये मांडर क्षेत्र में पाये जाते हैं। जैन लोगों ने शिबू भगत का अनुखरण नहीं किया वे 'अरुवा भगत' कहलाये क्योंकि वे केवल अरवा चावल ही खाते हैं।

घाघरा क्षेत्र में बेलगाड़ा निवासी बलराम भगत ने भगत–सम्प्रदाय की बागडोर संभाली। उसने गौ–पूजन पर अधिक जो दिया। उसने गायों–बैलों को हलों में जोतना अनुचित बतलाया। बलराम के अनुयायियों ने खेती करना छोड़ दिया और पशुपालक बन गये। वे दूध का सेवन करने लगे और अतिरिक्त दूध, घी और दही बेचने लगे। गौरक्षणी भगत कहे जाने वाले ये लोग मुख्यतः घाघरा एवं गुमला थानों में रहते हैं।

बिशुनपुर थाना के उरावां ग्राम के भीखू भगत ने विष्णु भगत–सम्प्रदाय को जन्म दिया। अन्य भगत नेताओं की तरह वह भी अंग्रेज–विरोधी था। अतः सरकार ने उसे भी बंदी बना लिया। उसने कहा कि ताना भगतों से उसका कुछ भी लेना–देना नहीं था और यह केवल विष्णु का भक्त था। उसका आन्दोलन गुप्त रूप से चलता रहा। वृहस्पतिवार की रात बैठकें हुआ करती थीं और सभी महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये जाते थे।

जतरा भगत द्वारा आरंभ किया गया यह आन्दोलन सम्पूर्ण उरांव–प्रदेश में जंगल की आग की तरह फैला। लोगों ने जमींदारों और अन्य गैर–आदिवासियों का काम करना बंद कर दिया। अपने अनुयायियों को मजदूरी करने से रोकने के अपराध में जतरा भगत को उसके सात अनुयायियों के साथ गुमला के अनुमंडल पदाधिकारी की कचहरी में मुकदमा चलाने के लिए उपस्थित किया गया। 1916 ई० में जतरा भगत को एक वर्ष की सजा हुई और बाद में उसे इस शर्त पर छोड़ा गया कि वह अपने नये सिद्धांतों का प्रचार नहीं करेगा और शांति बनाये रखेगा। किन्तु जेल में मिली घोर प्रताड़ना के फलस्वरूप जेल से बाहर आने के दो मास के भीतर ही उसकी मृत्यु हो गयी। इस तरह जतरा भगत नेपथ्य में चला गया किन्तु उसका आन्दोलन फलता–फूलता रहा। राँची जिला के विभिन्न भागों में उसके किसी–न–किसी अनुयायी ने नेतृत्व संभाल लिया। नये विचारों और नयी मानसिकता से सामाजिक परिवेश इतना अनुप्राणित हुआ कि आन्दोलन की प्रगति को अवरुद्ध करना कठिन हो गया। 1916 ई० के अंत तक आन्दोलन राँची जिला के दक्षिणी–पश्चिमी भागों में पश्चिमी और मध्य भागों को लांघता हुआ उत्तरी भागों में फैल गया, विशेषतः बेड़ी, कुडु मांडर थानों में। उत्तर की ओर यह पलामू जिला तक फैला। भगतों ने राजा के समक्ष चार प्रस्ताव रखे–

1. उन्हें स्वशासन प्रदान किया जाय।
2. राजा का पद समाप्त कर दिया जाय।
3. समानता स्थापित हो और
4. भूमि–कर समाप्त किया जाय क्योंकि भूमि ईश्वर प्रदत्त है।

राजा ने मांगों को ठुकरा दिया जिससे टकराव की स्थिति उत्पन्न हो गयी। यह आन्दोलन सरगजा में भी फैला जहाँ ताना भगत का यह आन्दोलन दो चरणों से होकर गुजरा, पहला चरण परिष्कार और परिहार से संबद्ध था अर्थात् प्राचीन आत्माओं और बोंगाओं का विनाश और निष्कासन विशेषतः उनका जो केवल कष्ट पहुँचाते थे। पुरानी परंपराओं और रीति–रिवाज का परित्याग विशेषतरू उनका जिन्होंने आदिवासियों को अन्य लोगों से निम्नस्तरीय बना दिया था। दूसरा चरण था–आचरण–संबंधी विशेष नियमों का निर्धारण और नये धर्म का संगठन और उसे निश्चित रूप देना। परिष्कार से संबद्ध पहले चरण में जादू–टोना और भूत–डायनों से संबद्ध मान्यताओं को समाप्त करना आवश्यक समझा गया। उराँवों को विश्वास है कि व्यक्ति और समाज का भविष्य अज्ञात शक्तियों पर आधारित है। ये अज्ञात शक्तियाँ मनुष्य के क्रियाकलापों को प्रभावित करती रहती हैं। यदि लोग इन शक्तियों को संतुष्ट रखते हैं तो उन्हें लाभ होता है और यदि ये अज्ञात शक्तियाँ कुपित हो जाती है तो बीमारी, मृत्यु और प्राकृतिक आपदाओं के रूप में कष्ट पहुँचाती हैं। अतः इन आत्माओं और बोंगाओं को समय–समय पर बलि चढ़ाकर संतुष्ट रखना आवश्यक हैं बलि और कर्मकांड पर काफी व्यय होता था जो उरांव के लिए भारी पड़ता था। जनजातियों का आर्थिक जीवन पहले से ही कष्टमय था। अब उन्हें जमींदारों को सेवायें देनी पड़ती थी और सरकार को कई प्रकार के कर देने पड़ते थे। 1820 से 1910 ई० तक कई बार उन्हें दुर्भिक्षों का सामना करना पड़ा। अल्पवृष्टि भी कष्टमय बना देती थी। सर्वाधिक प्रभावित भाग राँची जिला का पश्चिमी भाग था जहाँ अधिकांश आबादी उरांवों की थी। अतः जब उराँव के अस्तित्व के लिए ही खतरा पैदा हो गया तो स्वभावतः पुरानी देवी–देवताओं और पुरानी जीवन शैली में उनका विश्वास घटता गया। वे एक नये देवता की तलाश करने लगे जो पुरानी देवी–देवताओं से अधिक शक्तिशाली हो और उनके कष्टों का निवारण कर सके।

दुरात्माओं और कष्टदायी देवी–देवताओं को निष्कासित करने के लिए ताना भगतों द्वारा किये गये उपाय लगभग उसी तरह के थे जो उरांव मति द्वारा अपनाये जाते थे। उदाहरण के लिए नाचगाकर धर्मेश से प्रार्थना करना कि वह दुरात्माओं को निष्कासित कर दे। ऐसी प्रार्थना के समय ताना भगत तालियाँ बजाते थे और क्रमशः पैरों को उठाकर नाचते थे। कभी–कभी प्रार्थना करते हुए वे गोल–गोल घुमते थे, घुटनों के बल झुकते थे, हाथ मिलाने की मुद्रा अपनाते थे और तब दुरात्माओं तथा भूत–प्रेतों को भाग जाने का आदेश देते थे। भूत–प्रेतों और दुरात्माओं के निष्कासन के लिए ताना भगत गाँव के बाहर किसी खुली जगह में एकत्रित होते थे जहाँ वे तब तक गाते और प्रार्थना करते थे जब तक उनमें से किसी एक में किसी दुरात्मा का प्रवेश न हो जाता था। ऐसा व्यक्ति दौड़कर एक जगह जाता था जहाँ शेष सभी पहुँचते थे। इस जगह पर धर्मेश की प्रार्थना को जाती थी। सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी और सितारों का आह्वान किया जाता था। विशेष भक्ति से संपन्न व्यक्तियों–जैसे बिरसा भगवान तक की प्रार्थना को जाती थी। मजे की बात यह थी कि श्जर्मन बाबाश का भी आह्वान किया जाता था क्योंकि ताना परेशान कर सकते थे। उन दिनों जर्मनों की सफलता की चर्चा सर्वत्र हुआ करती थी और इन निरक्षर अज्ञानी किन्तु धार्मिक दृष्टि से उत्साही भगतों ने जर्मन बाबा को एक अज्ञात किन्तु शक्तिशाली देवता मान लिया। उनका विश्वास था कि अपने देवताओं के अतिरिक्त जर्मनों और हिन्दुओं के देवताओं की पूजा कर वे जमींदारों और साहुकारों के चंगुलों से निकल सकते थे।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है ताना भगत हिन्दुओं और इसाइयों की तुलना में अपनी गिरी हुई स्थिति से दुःखी थे। उनका विश्वास था कि उनकी दशा तभी सुधर सकती थी जब वे ईश्वर से तादात्म्य स्थापित कर सकते। इसके लिए उन्होंने कुछ कर्मकांडों का आविष्कार किया और एक निश्चित आचारसंहिता तैयार की। उनका कहना था सही कर्मकांड वही हो सकता था जो ईश्वर से सही संबंध स्थापित कर सके। इसके लिए अपवित्र वस्तुओं का परित्याग कर शुद्ध जीवनयापन आवश्यक था तभी ईश्वर से संपर्क स्थापित किया जा सकता था और सारे कष्टों से मुक्ति मिल सकती थी। उनकी आचारसंहिता उरांव भगतों अर्थात् सोखाओं की आचारसंहिता से मिलती जुलती है। भगत कर्मकांडों के माध्यम से धर्मेश से तादात्म्य स्थापित करता है इसलिए वह शुद्ध जीवन अपनाता और धर्मेश के प्रति समर्पित रहता है। ईश्वर की कृपा प्राप्ति के लिए पूजन से पहले स्वयं शुद्ध होना आवश्यक है। मांस–भक्षण का परित्याग इसलिए आवश्यक है कि जीव ईश्वर की देन है अतः पूजा और नैवेद्य अर्पण से पहले स्नान आवश्यक है। पूजन से पहले भोजन निषिद्ध है। पारंपरिक उरांव–व्यवस्था के अंतर्गत प्रत्येक धार्मिक समारोह में बलि, नैवेद्य और हड़िया का चढ़ाया जाना आवश्यक था लेकिन ताना भगतों ने यह सब बंद कर दिया। वह अपनी 'देवकुरी' (मंदिर) में फूल–मिष्टान चढ़ाने लगा और अगरबत्ती अथवा घी का दिया जलाने लगा। उसके लिए धर्म केवल भय के कारण देवताओं को संतुष्ट की प्रक्रिया नहीं है यह प्रक्रिया तो हृदय में धर्मेश को बैठा लेने की प्रक्रिया है। यह धर्म, प्रेम, पूजा और श्रद्धा पर आधारित है। ताना भगत के लिए पूर्वजों की आत्मा के अतिरिक्त सभी आत्मा दुरात्मा हैं और इसलिए उनका परित्याग किया जाना चाहिए। वह केवल सर्वोच्च देवता धर्मेश में विश्वास करता है और उसकी अनंत शक्ति का उपयोग स्वजनों की भलाई के लिए करता है। वह न तो स्वयं मदिरा का सेवन करता है और न मदिरा सेवन करने वालों के साथ बैठता है। वह स्वपाकी होता है और दूसरों के द्वारा पकाये गये अन्न से परहेज करता है। इस

तरह ताना भगतों की आचारसंहिता भी उरांव भगतों की आचार संहिता से बहुत भिन्न नहीं है।

ताना भगतों ने 'अखरा' में नृत्य, जतराओं में शिकार और घुमकुरिया का भी परित्याग कर दिया। वे न तो रंगीन वस्त्र पहनते थे और न किसी प्रकार का आभूषण धारण करते थे। उन्होंने 'गोदना' का भी परित्याग कर दिया। 'डाइनकुरी' और बोंगाओं को बलि को भी निषिद्ध कर दिया गया क्योंकि ईश्वर का निवास तो हृदय में है। यदि हम उनके गीतों और प्रार्थनाओं पर विचार करें तो लगता है कि सब कुछ उकने अंतःकरण से निःसृत होता है। धर्मेश प्रेम और पवित्रता का प्रतीक है जो न केवल सम्पूर्ण ब्रह्मांड में व्याप्त है बल्कि व्यक्ति के हृदय में अवस्थित है। स्वजनों के प्रति प्रेम और सद्भावना सभी जीवों के प्रति दयाभाव, भोजन और आचरण की शुद्धता ताना भगतों को मध्यकालीन संत भक्तों की परम्परा में स्थापित करते जान पड़ते हैं।

रात्रिबेला में नये धर्म के इन अनुयायियों की बड़ी संख्या जगह–जगह एकत्रित होने लगी और सूर्योदय तक भूतप्रेतों के निष्कासन के अभियान चलने लगे जिससे जमींदार आतांकित हो उठे। ताना भगतों ने जमींदारों को कर देना बंद कर दिया और उनके खेतों की जुताई बंद कर दी। अतः स्थानीय जमींदार और साहुकार ताना भगतों के संभावित विद्रोह से आतंकित हो उठे और उन्होंने पुलिस में इनकी शिकायत की। पुलिस के पदाधिकारी जो न इनके गीतों और प्रार्थनाओं को समझते थे, और न जिन्हें ताना भगतों के कर्मकांडों को देखने दिया जाता था इन्हें विद्रोही समझने लगे और उनकी सभाओं को गैरकानूनी मानने लगे। उनकी सभाओं पर प्रतिबंध लगाये गये और बहुतों को शांति भंग करने के नाम पर कचहरियों तक घसीटा गया। यह सब कुछ इस आन्दोलन को रोकने के लिए किया जा रहा था। यह आन्दोलन धीरे–धीरे स्वयं शिथिल पड़ता गया क्योंकि नया धर्म भी भूमि–संबंधी अधिकारों की रक्षा में अक्षम सिद्ध हुआ। दूसरी ओर सरकारी दमन का चक्र भी चलता रहा। ताना भगत धीरे–धीरे समझने लगे कि केवल धार्मिक आवेग के बल पर आन्दोलन को न तो लोकप्रिय बनाया जा सकता था और न जीवित रखा जा सकता था, इसके लिए एक राजनीतिक आधार की आवश्यकता थी।

अतः जब महात्मा गांधी ने 1921 ई० में सविनय अवज्ञा आन्दोलन को प्रारंभ किया तो कुडु थाना के सिद्ध भगत के नेतृत्व में ताना भगत पहली बार स्वतंत्रता आन्दोलन में शामिल हो गये। ऐसा उन्होंने इसलिए किया कि उनकी दृष्टि में गांधी जी, जतरा भगत अथवा बिरसा भगवान के मूल उद्देश्यों में विशेष अंतर नहीं था। ताना भगत कांग्रेस की ओर इसलिए भी आकर्षित हुए कि वे कांग्रेस को गांधीजी को पयार्यवाची मानते थे। ताना अधिवेशनों में शामिल हुए। महत्वपूर्ण बात यह थी कि इन स्थानों तक की लंबी यात्रायें पाँव पैदल की। उन्होंने चरखा को अपनाया और केवल खादी वस्त्रों का उपयोग करने लगे। उन्होंने विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार किया और तब से आज तक ताना भगतों के क्षेत्र में सर्वाधिक सक्रिय कांग्रेसी कार्यकर्ता इसी समुदाय से निकलते रहे हैं। वस्तुतः उनमें से कुछ यह भी समझते थे कि गांधीजी के रूप में जतरा भगत का पुनर्जन्म हुआ था। इस तरह एक आर्थिक और धार्मिक आन्दोलन के रूप में शुरू हुआ, ताना भगत–आन्दोलन, भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन से जुड़कर एक राजनीतिक आन्दोलन बन गया। कांग्रेसियों के रूप में इनकी अलग पहचान बनी। खद्दरधारी गांधी–टोपी पहने शंख एवं घंटी बजाते ताना भगतों की टोली गांधी जी को अत्यन्त प्रिय लगती थी। उन्होंने कहा भी था कि ताना भगत उनके सर्वाधिक प्रिय अनुयायी थे। 1930 ई० में जब बारदोली आन्दोलन शुरू हुआ तो ताना भगत भी इससे प्रभावित हुए और उन्होंने सरकार को कर देना बन्द कर दिया। यह सब कुछ उन्होंने तब किया जब उनमें न तो कोई कांग्रेसी संगठन था और न किसी कांग्रेसी कार्यकर्ता ने उन्हें ऐसा करने का परामर्श दिया था। उन्होंने जब देखा कि सरदार पटेल ने बारदोली में कर न देने का अभियान छेड़ दिया है तो इन्होंने स्वतः कर देना बंद कर दिया। फलस्वरूप जमींदारों ने उनकी जमीन नीलाम करायी और आज भी अनेक भूमिहीन ताना भगत हैं जो बटाईदारों अथवा कृषि–मजदूरों की तरह जी रहे हैं। सभी आपदाओं के बावजूद वे आज भी कांग्रेस के घोर समर्थक हैं। इन स्वतंत्रता सेनानियों ने स्वतंत्रता आन्दोलन में अपना महत्वपूर्ण योगदान किया फिर भी आज तक उनकी संपूर्ण भूमि नहीं लौटायी गई। जब बिहार में 1937 ई० में कांग्रेस की सरकार बनी तब ताना भगतों की जब्त जमीन को लौटाने की कोशिश अवश्य की गई लेकिन यह प्रयास अपूर्ण सिद्ध हुआ। अभी कुछ ही वर्ष पूर्व ताना भगतों की भूमि लौटाने संबंधी एक अधिनियम को पारित किया गया है। उन्हें कृषि के विकास के लिए अनुदान भी मिलने लगे हैं फिर भी उनकी स्थिति में अपेक्षित परिवर्तन नहीं हुआ है। इस संदर्भ में स्मरणीय बात यह है कि आज भगतों में केवल उपरांव ही नहीं हैं उनमें मुंडा और खड़िया भी शामिल हैं यद्यपि अभी भी उनमें उरांवों की ही संख्या ज्यादा है।

सरदार आंदोलन 1895 ई० तक आकर विफल हो गया था। बिरसा आंदोलन 1900 ई० में विफल कर दिया गया किन्तु सरकार कुछ सोचने पर विवश हुई और उसका परिणाम यह निकाला कि छोटानागपुर काश्तकारी कानून 1908 ई० में पारित हुआ। 1902–1910 ई० तक पैमाईश और बन्दोबस्ती का कार्य किया गया। मुण्डाओं को खूटकट्टी जमीन का अधिकार मिला। किन्तु आदिवासियों पर जुल्म, शोषण, गरीबी समाप्त नहीं हुई थी और न समाप्त हुआ था क्रांतिकारियों के जन्म का सिलसिला। जिस समय सरदार आंदोलन का तृतीय चरण समाप्त हो रहा था उसी समय गुमला जिले के विशुनपुर प्रखंड अन्तर्गत चिंगरी ग्राम में जतरा भगत का जन्म 1888 ई० के 2 अक्टूबर के दिन हुआ था। इनके पिता का नाम कोहरा भगत और माँ का नाम था लिवरी। बुधनी भगत इनकी पत्नी थी। बिरसा आंदोलन जब समाप्त हुआ था उस समय ये 11 वर्ष के थे। चौदह वर्ष बाद 1914 ई० में जब जतरा भगत 25 वर्ष के थे, इन्हें अचानक आत्मबोध का अनुभव होता है। कहा जाता है यह आत्मबोध उन्हें तंत्र–मंत्र सीखने के क्रम में हुआ था। वे हेसराग गांव के श्री तुरिया भगत से तंत्र–मंत्र से अगर बीमारियाँ ठीक हो सकती हैं तो इसके माध्यम से समाज में व्याप्त अत्याचार का नाश क्यों नहीं हो सकता। तत्काल इन्होंने ताना भगतों का समूह बनाया।

इन्होंने संकल्प लिया कि अंग्रेजी राज्य के अत्याचार, जमींदारों की बेगारी, अंधविश्वास एवं आदिवासी समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों का नाश अवश्य करेंगे। उन्हें इच्छा थी कि कुडुख समाज की गरीबी और कुरीतियों का उम्मूलन हो। इसके लिए उन्होंने धर्मेश की आराधना पर जोर दिया और सभी लोगों का धर्मेश की पूजा के लिए प्रेरित करना आरंभ किया। जतरा भगत के ताना आंदोलन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित थे–

1. स्वशासन का अधिकार।
2. राजा का पद समाप्त कर दिया जाए।
3. समानता स्थापित हो।
4. भूमि ईश्वर प्रदत्त है, इस पर समाप्त किए जाएँ।

1916 ई० तक यह ताना भगत आंदोलन चारों तरफ फैल गया था। इसके प्रचारक भी मिल गये थे। हनुमान उरांव चिंगरी का ही था जो जतरा भगत का समवय था। मांडर में शिबू भगत इस आंदोलन का प्रचारक था। घाघरा क्षेत्र में बोलगड़ा का बलराम भगत प्रचारक था। विशुनपुर थाना क्षेत्र में उरांवा गाँव का भीखू भगत प्रचारक बना था। ताना धर्म और ताना आंदोलन दोनों एक दूसरे के पर्याप्त थे।

ताना भगतों की अधिकांश आबादी विशुनपुर, घाघरा, गुमला, रायडीह, चौनपुर, पालकोट, सिसई, लापुंग, कुडू तथा प्रखंड क्षेत्रों में अवस्थित है अतः इन क्षेत्रों में इनका प्रचार अधिक हुआ। ताना

भगतों का पूजा पाठ, पवित्रता, जीवन की शुद्धता आदि का व्रत धर्मेश से जुड़ा था जिसके कारण समाज में उनका संगठन बढ़ने लगा। यह व्रत एक नया आदिवासी धर्म की तरह माना जाने लगा। जतरा भगत को एक अलौकिक व्यक्ति के रूप में देखा जाने लगा। धीरे–धीरे इनका विचार देशप्रेम से भी जुड़ने लगा क्योंकि. महात्मा गाँधी के विचार से ये काफी प्रभावित हुए थे। देशप्रेम का व्यवहार जमींदार, मिशन तथा ब्रिटिश विरोधी स्वर मुखरित करने लगा। प्रशासन सतर्क हो गया और देशप्रेम के गीत गानेवाले ताना भगतों को क्रमशः गिरफ्तार किया जाने लगा। अब इनकी बैठकें गुप्त रूप में होने लगी थीं। प्रत्येक वृहस्पतिवार की रात में बैठक कर ये महत्वपूर्ण निर्णय लिया करते थे जिनका कार्यान्वयन अन्य दिनों में किया जाता था।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषणों से ज्ञात होता है कि ताना भगतों का आंदोलन दो चरणों में चला। प्रथम चरण में इन्होंने अपना परिष्करण आंदोलन चलाया जिसमें मांस–मदिरा का त्याग, अंधविश्वासों का त्याग, जनेऊ व तिलक धारण करना, प्राचीन दुष्ट बोंगाओं का परित्याग जो केवल कष्ट पहुँचाते हैं आदि क्रियाएँ थीं। किन्तु दूसरे चरण में आचरण संबंधी नियमों का निर्धारण, नये धर्म का संगठन, देशप्रेम और शोषकों का विरोध आदि स्वर मुखरित हुए। यह दूसरा चरण ही ब्रिटिश शासकों की परेशानी का कारण बना जिसके कारण इन्हें गिरफ्तार किया जाने लगा था।

संदर्भ

1. एस० सी० राय, द मुंडाज, पृ० 226–27 जे० रीड, अनुच्छेद 42
2. हॉफमैन, इनसाइक्लोपिडिया XIII (1991), पृ० 3845
3. होम प्रो०, अगस्त 1890, न० 336, हॉफमैन फोरबिस को, 14 जनवरी, 1900
4. बंगाल जु० (क्रि०) प्रो०, 8 अगस्त, 1981, न० 545–550
5. पी० जे० पुर्ति– शहीद बिरसा मुंडा (टाटानगर, 1952), पृ० 3–4
6. कुमार सुरेश सिंह, बिरसा मुंडा और उनका आन्दोलन, पृ० 36–43
7. एस० सी० राय, वही, पृ० 326
8. होम प्रो०, अगस्त 1890, न० 336, हॉफमैन फोरबिस को, 14 जनवरी, 1900
9. एस० पी० जी० मिशन, क्वाटर्ली पेपर्स (जुलाई अक्टूबर 1895), पृ० 3
10. बंगाल पुलिस ऐब्सट्रैक्ट, जिल्द 8 (कलकत्ता, 14 सितम्बर, 1895) न० 37, अनुच्छेद 1674
11. आर० जे० हॉफमैन, इ० मुः, जिल्द 2, पृ० 568
12. एस० पी० सिन्हा, लाइफ ऐंड टाइम्स ऑफ बिरसा भगवान, पृ० 65
13. जे० रीड, वही, पृ० 46
14. छोटानागपुर कमिश्नर का बंगाल सरकार को पत्र, 30 मार्च, 1900